Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2020 SHISRRJ | Volume 3 | Issue 3 | ISSN : 2581- 6306

परती परिकथा' में जमींदारी व्यवस्था का चित्रण और किसान जीवन का संघर्ष

श्रवण सरोज
शोधार्थी (पी-एच.डी.) हिन्दी विभाग, जामिया मिल्लिया इस्लामिया, नई दिल्ली, भारत

शोध सारांश : - 'परती परिकथा' किसानों के जीवन से जुड़ा हुआ उपन्यास हैं। उपन्यास की कथा परती जमीन पर केन्द्रित है। उपन्यास में लेखक ने उतर नेपाल से लेकर दक्षिण गंगातट का वर्णन किया गया है। इसमें बिहार के पूर्णिया जिला है, जिसका आधार मैला आंचल में भी लेखक ने लिया है। स्वतन्त्रता के पश्चात् भूमि की नए सिरे से पैमाईश व सरकार द्वारा परती भूमि का आवंटन इस उपन्यास के केन्द्र में हैं। पूरी कथा इन दो बिन्दुओं के इर्द-गिर्द घूमती है। लेखक ने तत्कालीन राजनीतिक उतार-चढ़ाव को भी रेखांकित किया है। 'परती-परिकथा' का अध्ययन करने पर हमारे समक्ष कोशी-अंचल का संपूर्ण प्राकृतिक और मानवीय दृश्य झलक उठता है। साथ ही उन दृश्यों के साथ कलाकार की आस्था और अंतरदृष्टि भी झाँकती है। 'परती-परिकथा' में परती भूमि की धुरी पर समस्याएँ घूमती रहती हैं, और रेणु ने इसीलिए भूमि को अपनी दृष्टि का अवलम्बन माना है। परानपुर गाँव में निवास करने वाली सभी जातियों की समस्याएँ, सभी वर्गों की समस्याएँ चाहे वह सामाजिक हो या आर्थिक, नैतिक हो या भौगोलिक, सभी को उपन्यास में कुशलता से उद्घाटित किया गया है।

बीज शब्द : परती-परिकथा, आंचलिकता, फरीश्वरनाथ रेणु, जमींदारी प्रथा, किसान जीवन, सामाजिक व्यवस्था।

फणीश्वरनाथ रेणु का राजनैतिक क्षेत्र में सक्रिय रहना, उसके उपन्यासों में भी देखा जा सकता है।'परती परिकथा' के शुरूआत में ही लेखक किसानों के जीवन की समस्या बता देता हैं।

"धूसर, वीरान, अन्तहीन प्रान्तर।
पतिता भूमि, परती जमीन, वन्ध्या धरती ...।"[1]

किसानों के जीवन की समस्याओं को सामने रख लेखक ने अपनी सूक्ष्म मौलिकता का परिचय उपन्यास के आरम्भ में ही दिया हैं। लेखक ने परती भूमि को 'पतिता भूमि' कहकर सम्बोधित किया है। किसानों के जीवन की कठीनाईयों, समस्याओं, अभावों, निराशाओं को लेखक पहली ही पंक्ति में बयां कर लेता है। जमीदारों की जो प्रथा चली आई थी, वह आजादी के बाद भी वैसे ही सिर उठाए चल रही थी। किसान, किसान से मजदूर की तरफ अग्रसर थे। किसानों में आपसी फूट बढ़ गई थी। छोटे किसान और छोटे होते जा रहे थे और बड़े किसान और बड़े। डंडे और आंतक के बल पर किसानों की जमीने छीनी जा रही थी। किसान आन्दोलन भी हुए, परन्तु अधिकतर दबाए गए। परती-परिकथा' में परती भूमि की धुरी पर समस्याएँ घूमती रहती हैं, और रेणु ने इसीलिए भूमि को अपनी दृष्टि का अवलम्बन माना है। परानपुर गाँव में निवास करने वाली सभी जातियों की समस्याएँ, सभी वर्गों की समस्याएँ चाहे वह सामाजिक हो या आर्थिक, नैतिक हो या भौगोलिक, सभी को उपन्यास में कुशलता से उद्घाटित किया गया है। उपन्यासकार का कुशल अंकन हम तब देखते हैं जब सभी समस्याओं के केंद्र में परती 'धरती' को ही रखते हैं, क्योंकि सभी समस्याओं के चित्रण का माध्यम

जमीन ही है। जितेन्द्र और उसके विरोधियों का संघर्ष भी परती जमीन पर ही आधारित है। विशाल परती जमीन, बन्ध्या धरती की चौहद्दी पर परानपुर गाँव, पीड़ित भारतीय ग्रामीणों की भूमि, लालसा, नैतिक-अनैतिक सभी रूप धारण करती रहती है। जमींदारी उन्मूलन के पश्चात् भी भूमिहीनों की समस्या ज्यों की त्यों बनी रहती है। भूमि की समस्याएँ वहाँ के लोगों के हृदय में उथल-पुथल मचाती रहती हैं। वहाँ के ग्रामीणों का जीवन भले ही सामाजिक घटनाओं के मध्य दोलायित होता रहता है, परंतु भारतीय गाँव और ग्रामीण बेजान होकर अपनी एक लीक पर स्थिर दिखाई पड़ते हैं। ''नाम के लिए तो जमींदारी समाप्त हो गयी किंतु सभी पुराने जमींदार और राजा, बड़े-बड़े कृषक बन बैठे, जिनके पास दस-दस, पंद्रह-पंद्रह सौ बीघे जमीन थी। ऐसी अवस्था में पुराने सामन्तों और भूमिहीन कृषकों में संघर्ष होना स्वाभाविक है।''

उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में किसानों को लेकर अनेक आन्दोलन अस्तित्व में आए। प्राचीन काल से लेकर वर्तमान समय तक कृषि एवं कृषक भारतीय समाज तथा अर्थव्यवस्था का आधार स्तम्भ रहे हैं, इसलिए मेटकॉफ कहता था कि गाँव भारत की 'जान' है। इतिहास में न जाने कितने परिवर्तन हुए पर गाँव चलते रहे तथा अपनी स्वायत्त अर्थव्यवस्था को संजोए रहे। किसान आन्दोलनों के कारण को ब्रिटिश उपनिवेशिक शक्तियों को माना जा सकता हैं। ''1757 ई. के पश्चात् ब्रिटिश सरकार एवं कम्पनी का मुख्य बल अपने औपनिवेशिक हितों की पूर्ति करना था, जिसके लिए कम्पनी ने भारत में अपने शोषणकारी प्रशासनिक एवं आर्थिक नीति को लागू किया, जिसके अंतर्गत भू-राजस्व की तीन प्रणालियों रैय्यतवाड़ी, स्थायी बन्दोबस्त, महालवाड़ी जरिए किसानों का भरपुर आर्थिक शोषण किया गया।''[2] रेणु के उपन्यासों में भी इस घटना को प्रमुखता से उठाया गया हैं। किसानों के अनेक आन्दोलन हुए। परती जमीन को लेकर किसान निराश थे, परन्तु जैसे अफवाह फैला दी कि परती जमीन को सरकार ले रही है और उपजाऊ भूमि लोगों में ही आबंटित की जाएगी। इससे किसानों में आतंक का माहौल फैदा हो गया था। लेखक तत्कालीन किसानों की बदहाली को भी चित्रित किया है ''हिन्दुस्तान के अभागे किसानों से किसी भी माने में कम नहीं। इसी तरह पुराने हल से खेती करते थे, टूटे-फूटे झोपड़ों में रहते थे। राह-घाट-बाट की असुविधा, ठीक इसी तरह।''[3]

रेणु ने पूँजीवादी व्यवस्था का यथार्थ चित्रण अपनी स्वाभाविक भाषा-शैली में किया है ''मुंशी जलधारीलाल दास तहसीलदार और रामपखारन सिंह सिपाही। परानपुर इस्टेट के इन दो कर्मचारियों ने मिलकर, कलम का नोक और लाठी के जोर से, जमीदारी की रक्षा की। जमीदारी-उन्मुलन की चपेट से इस्टेट को बचाने का सारा श्रेय मुंशी जलधारीलाल को हैं।''[4]

जमींदारी प्रथा की जड़े समाज को गहरे से जकड़े हुए है जो निरन्तर समाज में एक वर्ग विशेष का प्रभुत्व बनाए हुए है। रेणु ने समाज में फैली राजनीतिक विषैलता को भी रेखांकित किया है। समाज का पतन गहरे तक राजनीतिक कारणों से भी हुआ है। किसान आन्दोलनों की आड़ में भी अपनी राजनीति करना रहा है। समाज में जातिवाद को बढ़ावा देना भी प्रमुख रहा है।

आजादी के बाद भूमि का आबंटन करके किसानों की स्थिति को सुधारा जा रहा हैं। जिसके लैंड सर्वे सेटलमेट कानून लाया गया है ''जमीन की फिर से पैमाइश हो रही है, साठ-सतर साल बाद। भूमि पर अधिकार। बटैयादारों, आधीदारों का जमीन पर सर्वाधिकार हो सकता है, यदि वह साबित कर दे कि जमीन उसी ने जोती बोई है।''[5]

रेणु ने एक कड़ी से दूसरी कड़ी जोड़ी हैं। किसान जीवन में इस सेटलमेट से भय और आतंक का महौल बनता है। लेखक ने सहज रूप से चित्रित किया है। ''जिले भर के किसानों और भूमिहीनों में महाभारत मचा हुआ है। सिर्फ भूमिहीन नहीं, डेढ़ सौ बीघे के मालिकों ने भी दूसरे बड़े किसानों की जमीन पर दावे किए हैं। ... हजार बीघे वाला भी एक इंच जमीन छोड़ने को राजी नहीं।''[6]

रेणु ने ग्राम्य जीवन के साथ-साथ किसानों के सामाजिक और आर्थिक उतार-चढ़ाव को भी लयवद्ध किया है क्रमबद्धता उपन्यास के प्रारंभ से अंत तक बनी हुई है। किसानों पर अनेक संकट आते है पर इसके बाबजूद फिर भी वह मिलकर सामाजिक, सांस्कृतिक गतिविधियों में भाग लेते हैं।

''करिके सोलहो सिंगार
गले मोतियन के हार
केशिया धरती लोटाय
चुनरी मोती बरसाय

चुन्नी-पन्नाँ बिखराय-य, छम्म-छम्माँ नाचे सुन्दरि नैका।"[7]

रेणु ने उपन्यास में गीतों-लोकगीतों को स्थान देकर मानव-मन के अन्तरमन में उतरने का प्रयास किया हैं। रेणु का वर्णन अनेक द्वारों से लयवद्ध होकर सजीव हो उठता है। उसमें किसान, खेत-खलियाण, लोक, लोक-परम्परा जीवन्त हो उठती हैं। लेखक ने चतुराई से उपन्यास में अमिट कथाचित्र का प्रणयन किया हैं।

परती जमीन के बारे रेणु एक स्थान पर कहता है "आज शुक्रवार ता. 8 जुलाई 55 को, न जाने कितने सौ वर्षों की पड़ी हुई वीरान धरती पर, पुरानी परती पर, टैक्टर चलाने जा रहे है, जितन बाबू। ऐसी जमीन, जिस पर सिर्फ बरसात में क्षणिक आशा की तरह हरियाली छा जाती हैं। ..."[8]

रेणु ने सिर्फ सामाजिक, राजनीतिक पहलुओं का उद्घाटन ही नही किया बल्कि इसके अन्दर जड़ों तक पहुचकर अपनी सुक्ष्मता का भी परिचय दिया है। जमीन के कारण उपजा परिवारिक द्वेष को भी रेणु ने सहज रेखांकित किया हैं। "सम्मिलित परिवार की आमदानी के पैसे से उसके लड़के ने जमीन खरीदी ... सब अपने नाम से। अब एक धूर जमीन भी नही देना चाहता उसका बेटा। गुजारिश है ...।"[9]

राजनीतिक के दाबपेच को रेणु ने जित्तन नामक पात्र के माध्यम से व्यक्त किया है। किसान, मजदूर, आम जन हमेशा ही राजनीतिज्ञयों ने छला हैं। सिर्फ अपने राजनीतिक स्वार्थ के लिए। "जितेन्द्र सोच में पड़ गया। हाथ के प्लेट्स को उलटते हुए बड़बड़ाया- तमाशा है। ... पिछले पाँच सौ वर्ष की बेकार पड़ी हुई परती पर खेत के लायक जमीन पाई गई। देश के लोगों की बात दूर, गाँव वाले भी नहीं जानते कि सरकार परती क्यों तोड़ रही है। कोसी योजना की सबसे बड़ी पेचीदा समस्या हल हुई है। दुलारीदाय को कोसी की मुख्य धारा से संयुक्त करके केवल करोडों रूपयों की बजत ही नहीं, करोड़ों की आमदानी भी होगी। बेचारी जनता का क्या दोष ? ऊपर से थोपे हुए सुख को वह क्या समझे ? ... मन की परती ज्यों-की-त्यों पड़ी हुई है। वीरान होती जा रही है। लगता है, मन को छुनेवाला मन्त्र ही हम भूल गए है।"[10] ज़मींदारी उन्मूलन कानून को ज़मींदारों ने अपने अनुकूल कर लिया. नये संविधान में संपत्ति रखने का अधिकार था और पुराने ज़मींदारी सिस्टम में जमींदार को भी जोत की जमीन रखने का अधिकार था । इन दोनों को मिला कर पुराने जमींदार अब बड़े किसान हो गए । उन सब ने अपने नाम सैकड़ों-हजारों एकड़ जमीन रख ली । ट्रैक्टर और अन्य आधुनिक साधनों से खेती करने की योजना भी बनी । इन्हीं बिंदुओं पर रेणु ने ध्यान खींचने की कोशिश की है. सर्वे सेटलमेंट अभियान इसी दिशा में उठाया गया एक कदम था कि वास्तविक किसानों को कानून का संरक्षण मिल सके ।

परती परिकथा नाम से ही कह सकते है कि परती जमीन के साथ चलती कहानी। किसानों की दूरदशा, अत्याचार, राजनीतिक दल का हस्तक्षेप, सामाजिक क्षेत्र, आर्थिक, सांस्कृतिक क्षेत्र में आम जन, मजदूर, किसान आदि का सजीव चित्रण रेणु ने किया हैं । अंत में रेणु के शब्दों में ही किसान जीवन की दूर्दशा को व्यक्त कर सकते है –"धरती नहीं, धरती की लाश, जिस पर कफन की तरह फैली हुई है बालूचरों की पंक्तियाँ। उतर नेपाल से शुरू होकर दक्षिण गंगातट तक, पूर्णिया जिले के नक्शे को असम भागों में विभक्त करता हुआ – फैला-फैला यह विशाल भू-भाग। लाखों एकड़ भूमि, जिस पर सिर्फ बरसात में क्षणिक आशा की तरह दूब हरी हो जाती है ।"[11]

निष्कर्ष : - 'परती-परिकथा' की भाषा हिंदी होते हुए मैथिली क्षेत्र की कथा-व्यथा को अपने अन्दर समेटे हुए है । भूमि-समस्या उपन्यास के केंद्र में है । जमींदारी व्यवस्था की हकीकत इस उपन्यास में बहुत ही ढंग से दिखाया गया है । 'परती-परिकथा' में पात्र सामाजिक वातावरण में जीते हैं और मिट्टी की महिमा, चाहे वह लहलहाते खेतों की हरियाली से हो, या बंजर, उसर जमीन से हो सब काबखान करते हैं। उसमें स्थानीय रंग भरने के लिए प्रचुरता से स्थानीय बोली का प्रयोग करते हैं साथ ही वहाँ की बहुलता को और भी अधिक चमत्कारपूर्ण बनाने के लिए क्षेत्रीय बोली से इतर अंग्रेजी, बंग्ला, पहाड़ी आदि भाषाओं के शब्दों का प्रयोग जहाँ-तहाँ कुशलतापूर्वक करते हैं। इतना ही नहीं, भाषा बोली के साथ-साथ उनके व्यवहार को भी रेखांकित करते हैं। 'परती-परिकथा' की सबसे बड़ी खूबी है कि उस अंचल में प्रचलित तमाम लोक-कथाओं की झलक इस उपन्यास में विद्यमान है।उपन्यास में आंचलिकता के कारण वहाँ की मिट्टी की सुगंध, परिवेश और क्षेत्र का सजीव चित्रण हुआ है।इस उपन्यास का कथानक आजादी के बाद के आस-पास के समय का है। परानपुर ही नहीं, सभी गाँव टूट रहे हैं। व्यक्ति टूट रहा है- 'रोज-रोज काँच के बर्तनों की तरह' साथ ही निर्माण कार्य भी हो रहे हैं। नया गाँव, नए परिवार और नए लोग ।

उपन्यासकार ने जमींदारी व्यवस्था को केंद्र में रखकर देश भर के सामंतों और पूँजीपतियों का चेहरा साफ किया है। यही कारण है उपन्यास का फलक बड़ा हो गया है। जमींदारी व्यवस्था को लेकर रेणु की दृष्टि बहुत ही पैनी है। रेणु ने ''परती-परिकथा'' में यह दिखाने का प्रयास किया है कि जमींदारी या पूँजीपति वर्ग के लोग, आमजनों का सदियों से शोषण करते आ रहे हैं। वे समय के साथ-साथ अपनी नीति भी बदलते रहे हैं। आमजनों के दिलों में बैठने के लिए सहानुभूति दिखाते रहे हैं। साथ में अपनी जमीन या धन को किसी तरह बरकरार रख, उसी के बल पर लोगों का शोषणा भी करते रहे हैं। यह उपन्यास, इसलिए भी प्रासंगिक है कि आजादी के पहले से लेकर आज तक यही स्थिति बनी हुई है।

सन्दर्भ-सूची :

1.परतीः परिकथा, फणीश्वरनाथ रेणु, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 12वाँ संस्करण 2016, पृ. 11

2.महासागर (पत्रिका), सं. राजेश राजन, अरिहन्त मीडिया प्रोमोर्टस, मेरठ, पृ. 54

3.परतीः परिकथा, फणीश्वरनाथ रेणु, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 12वाँ संस्करण 2016, पृ. 19

4.वही, पृ. 26

5.वही, पृ. 27

6.परती : परिकथा, फणीश्वरनाथ रेणु, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 12 वाँ संस्करण 2016, पृ. 28

7.वही, पृ. 146

8.वही, पृ. 47

9.परती : परिकथा, फणीश्वरनाथ रेणु, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 12वाँ संस्करण 2016, पृ. 317

10.वही, पृ. 358

11.वही, पृ. 11